चारु चन्द्र लेख उपन्यास में राजनैतिक चिन्तन

डॉ. सरोज कुमारी
हिन्दी विभाग,
विवेकानन्द कॉलिज, दिल्ली

सारांशिका

इतिहास के माध्यम से द्विवेदी जी ने राज तन्त्रात्मक शासन की पद्धति की विफलता को चित्रित किया है। राजा, उसके सामन्त एवं वेतन भोगी सेना के भरोसे राष्ट्र की नियति सौंपने का दुष्परिणाम निरीह जनता को भी भोगना पड़ता है। यह कथन पीड़ित मानव के प्रति करुणा संवेदना के स्वर उद्घोषित करता है।'' अतः राज तन्त्र की यह सबसे बड़ी फलतोरी है कि इसमें जन–सामान्य की भागेदारी नहीं रहती जिसके कारण राजा के चारित्रिक दोष, रानियों के स्वार्थ पूर्ण कुचक्र अथवा सेनापति की त्रुटिपूर्ण रणनीति के कारण शौर्य और बलिदान का धनी देश भी पराधीन हो जाता है। इसलिए अक्षोभ्य भैरव के द्वारा सामन्ती व्यवस्था के प्रतिरोपण वंशानुगत सामन्त प्रथा तथा भूमि दानादि के द्वारा भूमि का सतत विभाजन आदि समस्याओं का चित्रण किया है, जिनके कारण शासन खोखला एवं दुर्बल बन जाता है। राष्ट्रीय अस्मिता को ध्वस्त करने वाली इस व्यवस्था पर प्रहार करते हुए अक्षोभ्य भैरव कहता है–''राज शक्ति दुर्बल है, प्रजा मूकदर्शक बनी हुई है। राज पुत्रों की झूठी दर्पोक्तियाँ अन्तःसार–शून्य ढक बन गई है। धिक्कार है इस दम्भ वर्धिनी, पाखण्ड प्रसारिणी जड़ नीति को।'' ऐसी प्रपंच व्यवस्था को यथा शीघ्र समाप्त नहीं किया जाता तो राज्य गुलाम हो जायेगा।

मुख्य शब्द : चारू, चन्द्र, राजनैतिक, चिन्तन, राजतन्त्रात्मक शासन, सामन्त प्रथा।

प्रस्तावना–आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी के चारुचन्द्रलेख उपन्यास में राजनैतिक चिन्ता का समकालीन परिवेश देखने को मिलता है। राज्य में जनता और राजा की वैसी स्थिति होनी चाहिए जिससे जनकल्याण की भावना से राज्य हीत हो। इसिलए द्विवेदी जी की समाजोन्मुखी दृष्टि राजनीति के जन केन्द्रित रुप में आस्था व्यक्त रखती है। इस उपन्यास का ऐतिहासिक कथानक राज तन्त्र समकालीन वातावरण से सम्बद्ध है परन्तु इसके विभिन्न पात्र प्रजा तान्त्रिक मूल्यों के प्रति रक्तदान व्यक्त करते हैंइसमें राजा और रानी दोनों राजतंत्र के दोषों की आलोचना करते हैं। एक ग्राम बालिका रानी चन्द्रलेखा युद्ध के लिए प्रजा का सहयोग आवश्यक मानती हुई कहती है–''वे समझते हैं, राज्य राजा का होता है ..... कुछ ऐसा होना चाहिये कि इस जीत या हार को प्रजा अपनी जीत या हार समझे।''[1] वह स्वयं गाँव–गाँव घूमकर जन चेतना की जाग्रति का कार्य करती है। उसी की प्रेरणा से प्रवृत्त राजा सातवाहन भी जनता के आत्मबलजागरण में 'राजा की विचित्र कल्पना' को बाधक मानता है। इसलिए राजा की इस दृष्टि की प्रशन्सा करता हुआ अमोघ वज्र का कथन देखिए–''इस देश में केवल तुमने समझा है कि राजधानी राज्य नहीं होती, जनता ही वास्तविक राज्य होती है।''[2] जनता की शक्ति को समझकर ही वृद्ध मंत्री विद्याधर भी हारजीत के बजाय जनता के आत्मविश्वास को अधिक महत्व देता है। ''सारा का सारा देश विदेशियों के आत्कान्त हो जाय, मुझे रंचमात्र भी चिंता नहीं होगी, यदि प्रजा में आत्म विश्वास बना रहे।''[3] इसी तरह से अक्षेभ्य भैरव के आधुनिक प्रजातन्त्रीय चिन्तन धारा की समानता, ट्रस्टी शिप एवं जनता की प्रभु सत्ता के स्वर सुनाई पड़ते हैं – ''शपथ कर कि तू सीधे जनता से सम्पर्क रखेगा, किसी को छोटा और किसी को बड़ा नहीं मानेगा, धरती को बपौती नहीं, धरोहर समझेगा, सामन्ती प्रथा का अच्छेद करेगा।''[4] ऐसी परिस्थितियों में यह विचार देखिए – ''सामान्य जनता में राज वंश और राजनीति के प्रति कार्य आस्था नहीं थी।''[5] बल्कि यहाँ पर दूसरों के साथ तादात्म्य या एकत्व की अनुभूति ही चरम मनुष्यता है।''[6] इसलिए दूसरों की सहायता करना मनुष्य के उच्च गुणों को दर्शाता है।''[7]

इस उपन्यास में भी लेखक ने राजनीति को लोक सेवा की नींव पर प्रतिष्ठित करने का संकेत किया है। सात वाहन के शब्दों को देखिए–''राजा उस समय वही कहा जायेगा, जो लोक सेवक होगासेवा भावना ही कदाचित उत्तम नेतृत्व का रुप ग्रहण करती है।'' इसी प्रकार चक्रवर्ती राजा के गुणों की चर्चा के प्रसंग में भी सेवा भावना को महत्व दिया जाता है–''चक्रवर्ती राज्य की सीमाओं में बन्धा नहीं रहता। वह राज्य सुख का भोक्ता नहीं, दीन और दलित का रक्षक या गोप्ता होता है।'' वास्तव में राजा और जनता के बीच जब तक समन्वयवादी भावना नहीं होगी तब तक राज्य में अराजकता का बोल बाला रहेगा और राज्य पतन की ओर अग्रसर होने लगेगा।

राष्ट्रीय संकट के समय सभी देशवासियों को पारस्परिक भेद भुलाकर एक दुर्भेद्य चट्टान की तरह शत्रु का प्रतिरोध करना चाहिये। इसलिए उस समय सभी मनुष्यों की क्रिया शक्ति की उपासना ही सम्पूर्ण राष्ट्र का कर्तव्य हो जाता है और समाज सुधार के अन्य सभी प्रश्न गौण हो जाते हैं। विद्याधर जी तभी तो कहते हैं ''हमें इस देश की रक्षा करनी है–इसके समस्त गुण–दोषों के साथ। ..... सुधार फिर हो लेंगे, क्रान्तियाँ आती–जाती रहेंगी, पर जिसके बिना कुछ भी नहीं रह जायेगा, वह है हमारा समाज।''[9] इसलिए देश पर संकट के समय व्यर्थ की बहस छेड़कर जनता का मनोबल गिराना ठीक नहीं होता है। तभी तो मंत्री विद्याधर अमोघवज्र की तरह दूरगामी परिणामों को

देखता है और उनमें उलझता नहीं बल्कि शत्रु पर दृढ़ प्रहार करने की प्रेरणा देता है–''कसकर आघात करो। प्रत्येक चोट शत्रु को क्षीण बनाती है। प्रत्येक चोट का मूल्य है। कायर हिसाब किया करते हैं, वीर प्राणों की आहुति देते हैं।'' इस तरह सेराष्ट्रीय संकट की वेला में जन सामान्य के उत्साह एवं बलिदान का बहुत बड़ा मूल्य होता है। उस समय राष्ट्र के कर्णधारों की सतर्कता, सूझबूझएवं सही निर्णय लेने की क्षमता भी कम महत्वपूर्ण नहीं होती है। राज्य में जन नायकों की इच्छा, क्रिया एवं ज्ञान शक्ति का समन्वय ही सफलता दिला सकता है। इस उपन्यास में राजा, रानी और मन्त्री–तीनों तीन रास्तों पर चलते हैं। राजा की मोहजन्य निष्क्रियता जन सामान्य के उत्साह को व्यर्थ बना देती है। तब विचलित होकर मैना स्पष्ट कहती है–''कल आप रानी के लिए व्याकुल थे, आज धीर शर्मा के लिए चिन्तित हैं, कल विद्याधर मन्त्री या बोध प्रधान के लिए कातर हो उठेंगे। इस प्रकार मोह की छोटी–छोटी गठरियों के ढोने में ही हमारी शक्ति क्षीण हो जायेगी।'' इस तरह से छोटी सीमाओं के घरौन्दों का मोह छोड़े बिना राष्ट्र रक्षा का गुरुतर कार्य कैसे सफल हो सकता है? ग्रह नक्षत्रों एवं जादू टोनों पर विश्वास करने वाला निष्प्राण देश शत्रुओं का प्रतिकार नहीं कर सकता। इस सम्बन्ध में विद्याधर जी का कथन देखिए–''विधाता ने मनुष्य के अन्तरतर में ग्रह नक्षत्रों की शक्ति से बड़ी शक्ति दी है। .... धरती पर विश्वास करो। आकाश के ग्रह धरती के गुलाम हैं।'' जब तक मनुष्य अपनी शक्ति को नहीं पहचानता तब तक वह उन्नतिशील पथ पर अग्रसर नहीं होगा।

यह उपन्यास भारत पर चीनी आक्रमण के समय लिखा गया था। अतः इसमें राष्ट्र रक्षा का उद्‌बोधन मुखरित होना स्वाभाविक ही है। रानी के सम्बोधन में द्विवेदी जी का राष्ट्र को आह्‌वान अभिव्यक्त होता है–''वीरों, अपनी मातृ भूमि की रक्षा किसी जाति विशेष का पेशा नहीं है, वह सबका जन्म सिद्ध अधिकार और विधि–विहित धर्म है।'' इसकी रक्षा करना हम सभी की जिम्मेदारी है।

अतः लेखक राजनीतिक स्वार्थ सिद्धि के लिए धर्मगत या जातिगत भेदभाव को उभारने का विरोधी है। तभी तो हिन्दू–मुसलमान के भेदभाव में राष्ट्र का विनाश देखने वाला सीदी मौला सुलतान की निन्दा करता है। ''वह भारतीय जनता को दो भागों में बाँटना चाहता है–हिन्दू और मुसलमान।..... परमात्मा ने आदमी को दो तरह का नहीं बनाया। सुलतान बनाने जा रहा है।''[11] लेखक ने शाह और उसकी हिन्दू पत्नी को साम्प्रदायिक सौहार्द के प्रतीक के रुप में प्रस्तुत किया है।

सन्दर्भ सूची :–

1. हजारी प्रसाद द्विवेदी – चारुचन्द्रलेख – पृष्ठ संख्या – 98
2. हजारी प्रसाद द्विवेदी – चारुचन्द्रलेख – पृष्ठ संख्या –343
3. हजारी प्रसाद द्विवेदी – चारुचन्द्रलेख – पृष्ठ संख्या –88
4. हजारी प्रसाद द्विवेदी – चारुचन्द्रलेख – पृष्ठ संख्या –409
5. डॉ. मौहम्मद शब्बीर – हिन्दी भाषा और साहित्य–पृष्ठ संख्या–45
6. हजारी प्रसाद द्विवेदी – अशोक के फल– पृष्ठ संख्या–79
7. डॉ. राम किशोर यादव – हिन्दी गद्य : उद्‌भव और विकास – पृष्ठ संख्या – 16
8. हजारी प्रसाद द्विवेदी – चारुचन्द्रलेख – पृष्ठ संख्या –344
9. हजारी प्रसाद द्विवेदी – चारुचन्द्रलेख – पृष्ठ संख्या –345
10. हजारी प्रसाद द्विवेदी – चारुचन्द्रलेख – पृष्ठ संख्या –238
11. हजारी प्रसाद द्विवेदी – चारुचन्द्रलेख – पृष्ठ संख्या –421